India Between "Soft State" and "Soft Power"
"सॉफ्ट राष्ट्र" और "सॉफ्ट शक्ति" के बीच झूलता भारत

जेक्स ई. सी. हाईमैन्स
Jacques E. C. Hymans
1.19.10

"भारत की समस्या यह है कि हमने कभी-भी अपने पर की गई कार्रवाई के खिलाफ़ किसी देश पर कोई भी कीमत थोपी नहीं है." उप राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार सतीश चन्द्र ने ये शब्द पिछले सितंबर में कहे थे. "बस हम चुप रहते हैं और जो कुछ भी हमारे साथ होता है उसे स्वीकार कर लेते हैं." सुभाष चन्द्र के इन शब्दों में भारतीय उच्च वर्ग के लोगों और आम आदमी की भावनाओं की गूँज सुनाई पड़ती है. बहुत से भारतीय यह मानते हैं कि देश के बाहरी शत्रु, प्रतिद्वंद्वी और दोस्त कोई भी हमें धौंस दिखा सकते हैं, क्योंकि सुभाष चंद्र के शब्दों में हम "सॉफ्ट राष्ट्र" हैं. इसके अलावा यदि साफ़-साफ़ बात की जाए तो अधिकांश भारतीय भी यही सोचते हैं.

सन् 1960 में या 1990 के अंत तक भी भारत की अंतर्राष्ट्रीय छवि को लेकर सुभाष चंद्र का यह मूल्यांकन बिल्कुल सही प्रतीत होता है. बहरहाल इतना अंतर ज़रूर पड़ा है कि अब भारतीय "चुप नहीं बैठते". शीत युद्ध के अंत तक वाशिंगटन डी सी और अन्य स्थानों पर बसे उच्च वर्ग के लोग भारत की विदेश नीति के बारे में नकारात्मक और यही घिसी-पीटी धारणा ही रखते थे और भारत को एक "सॉफ्ट राष्ट्र" मानते रहे हैं. इसका अर्थ यह है कि भारत कानूनी ढर्रे पर चलने वाला एक दब्बू देश है और इसे विश्व-मंचों पर पदासीन कठोर रुख वाले और वास्तविकता में जीने वाले देश गंभीरता से नहीं लेते हैं.

लेकिन शीत युद्ध को समाप्त हुए दो दशक बीत गए हैं और 1990 में भारत की छवि के बारे में सही प्रतीत होने वाला यह विश्लेषण अब 2010 में सही नहीं लगता. एक स्तर पर अंतर्राष्ट्रीय समुदाय ने निश्चय ही यह पाया है कि लगभग एक दशक से भारत की विदेश नीति का आधार गुट निरपेक्ष आंदोलन न होकर नाटकीय रूप में दावोस हो गया है. लेकिन कहीं गहरे स्तर पर अंतर्राष्ट्रीय समुदाय ने भी विदेश नीति के अपने लक्ष्यों को बदल लिया है. विश्व भर के देश और यहाँ तक कि अमरीका भी बुश / चेनी परीक्षण के बाद अब "सॉफ़्टनेस" को "कमज़ोरी" या "कठोरता" को "शक्ति" का पर्याय नहीं मानते. इसके बजाय प्रोफेसर जोज़फ़ न्ये के नपे-तुले शब्दों में "सॉफ़्ट शक्ति" को जुटाने के लिए वे सक्रिय रूप से कार्य करने के लिए भी उत्सुक हैं.

इसलिए भारत के "राष्ट्रीय ब्रांड मैनेजरों" के लिए आज मुख्य चुनौती सुभाष चंद्र के शब्दों में कथित परंपरागत "सॉफ़्टनेस" को छोड़ने की नहीं है, बल्कि उसमें अत्यधिक सुधार करने से बचने की है.

सॉफ्ट शक्ति क्या है?

शक्ति वह क्षमता है जिससे आप दूसरों को अपनी इच्छानुसार वह सब कुछ करने को भी मज़बूर कर

देते हैं जिसे वे अन्यथा न भी करते. शक्ति के मूलत: दो रूप हैं : कठोर और सॉफ्ट. उनके बीच का अंतर उनकी आपेक्षिक क्रूरता में निहित नहीं है बल्कि उनकी आपेक्षिक यथार्थता में निहित है. किसी को नष्ट करने की धमकी देने के बजाय उसे आर्थिक प्रलोभन देना भी शक्ति का "कठोर" रूप ही है. इसके विपरीत "सॉफ्ट" शक्ति का वह रूप है जो अमूर्त होता है. इसका संबंध उससे नहीं जिस पर आपका स्वामित्व है, बल्कि उससे है जिसका आप *प्रतिनिधित्व* करते हैं. दूसरे शब्दों में अमूर्त या सॉफ्ट शक्ति वह क्षमता है जिससे आप दूसरों को अपनी इच्छानुसार काम करने को मज़बूर कर देते हैं, क्योंकि आपको देखने का उनका नज़रिया ही वही है. किसी राष्ट्र की अमूर्त शक्ति की तुलना किसी फिल्मी सितारे की उस शक्ति से की जा सकती है जिससे वह लोगों को किसी खास ब्रांड के किसी भी साबुन या फ्राइड चिकन को खरीदने के लिए विवश कर सकता है. अमूर्त शक्ति का एक और हल्का पक्ष भी है, जिसे मैं "अमूर्त असहायता" का नाम देता हूँ. अमूर्त असहायता एक ऐसी विडंबनापूर्ण स्थिति है जिसमें आप असहाय होकर दूसरों को देखते रहने के लिए विवश होते हैं और उन्हें देखने के कारण ही आप वह सब कुछ करने को विवश होते हैं जिसे आप नहीं करना चाहते. राष्ट्र की अमूर्त असहायता उन फिल्मी सितारों की तरह होती है, जिनसे आज के पत्रकार कुछ भी कहलवाने में कामयाब हो जाते हैं.

शक्ति के अमूर्त और कठोर रूपों की असहायता के आपसी संबंध सीधे-सरल नहीं होते. जैसे-जैसे राष्ट्र की कठोर शक्ति का विकास होता जाता है, कभी-कभी उसकी अमूर्त शक्ति भी बढ़ने लगती है. लेकिन कई बार तो ठीक इससे उलटा होता है. उदाहरण के लिए जर्मनी के भाग्य को ही देखें. जैसे-जैसे पहले विश्व युद्ध तक जर्मनी की कठोर शक्ति बढ़ती गई, उसके पड़ोसी देश जर्मनी की राजनैतिक और आर्थिक प्रणाली में ही नहीं जर्मन चरित्र में भी खामियाँ ढूँढने लगे. संक्षेप में जर्मनी के सैन्यीकरण के कारण उसकी अमूर्त असहायता भी बढ़ने लगी और उसके फलस्वरूप अंतत: उसकी सैनिक असहायता भी बढ़ती चली गई.

भारत की अस्थिर अमूर्त शक्ति

1990 के दशक के उत्तरार्ध से भारत की कठोर और अमूर्त दोनों ही शक्तियों का जबर्दस्त उदय हुआ है. कम से कम वाशिंगटन डी.सी. के दृष्टिकोण से तो यह सही है. भारत की नई कठोर शक्ति उसकी बढ़ती आर्थिक और सैनिक सम्पदा पर आधारित है. और उसकी हाल ही में उदीयमान अमूर्त शक्ति चार बुनियादी छवियों पर निर्भर है:

- बॉलीवुड: हमारे वैश्विक समकालीन सांस्कृतिक जीवन के प्रति भारत का वैविध्यपूर्ण योगदान
- बम : भूराजनीति में कठोर और मज़बूत खिलाड़ी के रूप में नई मान्यता
- बैंगलोर: कारोबार और प्रौद्योगिकी की दुनिया में उत्कृष्टता के लिए भारत की नई प्रतिष्ठा
- पड़ोसी दोस्त: भारतीय-अमरीकियों की "मॉडल अल्पसंख्यकों" के रूप में पहचान बढ़ रही है.

कई लोगों के मन में भारत की पाँचवीं छवि "विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र" के रूप में है, लेकिन खेद की बात है कि वाशिंगटन शाब्दिक आडंबर के सिवाय भारत के लोकतांत्रिक स्वरूप को कोई महत्व

नहीं देता. यद्यपि भारतीय लोकतंत्र में निरंतरता है, लेकिन कुछ वर्ष पूर्व ही अमरीकी विदेश नीति के उच्च वर्ग के कुछ लोगों के कारण भारत को अब अमूर्त शक्ति के रूप में महत्व मिलने लगा है. इससे पूर्व वाशिंगटन आम तौर पर लोकतांत्रिक भारत की या तो अवहेलना करता रहा है या फिर उसकी अवमानना करता रहा है.

तीव्र गति से अमूर्त शक्ति के रूप में भारत का उदय बहुत प्रभावी रहा है, लेकिन भारत की नई और सकारात्मक छवि भी अमरीकी जनमानस में बहुत गहरे नहीं उतर पाई है. इस नई छवि के पीछे भारत और भारतीयों के लिए पूर्वबद्ध नकारात्मक भावना अभी भी घर किए हुए है. उदाहरण के लिए कमज़ोर लोगों के रूप में तो भारतीयों की छवि है ही. इसके साथ-साथ पश्चिमी संस्कृति के आदिम जातियों के समान जंगली जानवरों से भी उनकी तुलना की जाती रही है.

यदि भारत अपनी नई सैनिक शक्ति का उपयोग आत्मरक्षा के अलावा अन्य प्रयोजनों के लिए भी करने के लिए आगे आता है तो भले ही आज अमरीकियों को एहसास न हो, लेकिन कई अमरीकियों की पूर्वबद्ध धारणा तो बदल ही सकती है. यही कारण है कि वाशिंगटन नई दिल्ली से रणनीतिक भागीदारी के लिए कम ही उत्सुक होगा. शायद यही देखते हुए आतंकवादियों ने भारत को भड़काने की कोशिश में सन् 2001 में भारतीय संसद पर और सन् 2008 में मुंबई के ताज होटल जैसे प्रतीकात्मक स्थलों पर लगातार हमला किए हैं. अभी तक भारत आतंकवादियों के जाल में नहीं फँसा है,लेकिन कब तक वह बच सकेगा.

अमूर्त शक्ति (सॉफ्ट पावर) को हासिल करना और उसे बनाए रखना : कैसे – मार्गदर्शिका

केवल नई दिल्ली के लिए ही नहीं विश्व भर के नीति-निर्माताओं के लिए अमूर्त शक्ति (सॉफ्ट पावर) को हासिल करना निश्चय ही एक कठिन चुनौती है. हल्के और उथले अंतर्राष्ट्रीय मत-मतांतरों के बीच अमूर्त शक्ति (सॉफ्ट पावर) को हासिल करने का मूल मंत्र ब्रिटिश कवि रुडयार्ड किपलिंग की रचनाओं में पाया जा सकता है. अपनी प्रसिद्ध कविता "इफ़" और अन्य रचनाओं में किपलिंग ने इसके मूल व्यवहार की तुलना बचकानी कायरता के विपरीत इसके "पौरुष" या जंगली हिंसा से की है. आज अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली में अमूर्त शक्ति (सॉफ्ट पावर) की छवि का मूल मंत्र है पौरुष. किपलिंग के समय से लेकर आज तक यही स्थिति है.

यदि भारत पौरुष से संबंधित किपलिंग के मूल मंत्र पर दृढ़ता से चलता रहे, जैसा कि पिछले दशक से चलता रहा है तो यह न केवल अमूर्त शक्ति (सॉफ्ट पावर) को हासिल कर सकता है बल्कि उसे बढ़ाकर वाशिंगटन की नज़रों में ऊपर भी उठ सकता है. यदि भारत ने ऐसा नहीं किया तो उसकी यह नई छवि तेज़ी से तिरोहित भी हो सकती है. और यदि भारत की अमूर्त शक्ति (सॉफ्ट पावर) का भंडार कम होना शुरू हो गया तो हम अमरीका की कितनी भी आलोचना करें और यह आलोचना कितनी भी न्यायोचित क्यों न हो, भारत के बारे में वे तमाम प्रचलित और पूर्वबद्ध धारणाएँ एक बार फिर से सिर उठाने लगेंगी जिन्हें हाल ही में नई दिल्ली की पिछली सरकारों ने बड़ी मेहनत से दूर किया है.

निश्चय ही यह विडंबना ही है कि भारतीयों को एक बार फिर से ब्रिटिश साम्राज्य के कवि किपलिंग को

पढ़ना होगा. आखिरकार भारत ने सत्ता का वही अंतर्राष्ट्रीय खेल खेलने का निश्चय कर लिया है जिसने ब्रिटिश साम्राज्य को जन्म दिया था. हो सकता है कि उन्होंने इस खेल के नियम नहीं लिखे थे,लेकिन उन्होंने इसे जितने अच्छे तरीके से स्वर दिया है वैसा किसी और ने अब तक नहीं किया है. इसलिए किपलिंग को फिर से पढ़ें, लेकिन उसे पढ़ते समय यह न भूलें कि भारत के स्वाधीनता संग्राम के सेनानी अपने बेटे-बेटियों से यह अपेक्षा करते थे कि वे अपनी शिक्षा अलग-अलग गुरुओं के चरणों में बैठकर प्राप्त करें.

जेक्स ई. सी. हाईमैन्स सदर्न कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के सहायक प्रोफेसर हैं. उनकी प्रकाशित कृतियाँ हैं: "इंडियाज़ सॉफ्ट पावर ऐंड वल्नरेबिलिटी", इंडियन रिव्यू वॉल्यूम 8, नं. 3 (अगस्त 2009) और द साइकोलॉजी ऑफ़ न्यूक्लियरः आइडेंटिटी, इमोशन्स ऐंड फ़ॉरेन पॉलिसी (कैम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रैस, 2006),जिस पर उन्हें दो प्रमुख पुस्तक पुरस्कार प्राप्त हुए हैं.

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा),रेल मंत्रालय, भारत सरकार

<malhotravk@gmail.com>